thearyasamaj.org

Vol.8 Nov.-Dec. 2014 No.5
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

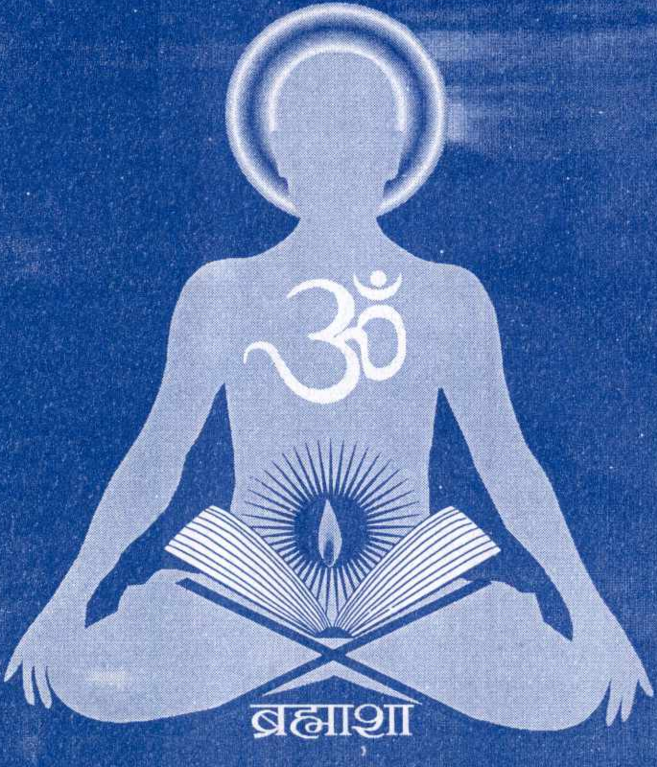

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

thearyasamaj.org

भूमि है सुपुत्रों के लिए

-प्रियवीर हेमाइना

नमस्कार है सुखों के दाता,
नमस्कार है विश्व-विधाता!
हे ईश्वर! हम तुम्हें ध्याएँ,
पाप-कर्म के पास न जाएँ।
बुद्धि करो हमारी निर्मल,
जीवनी हो हमारी उज्ज्वल।
गायत्री बने जीवनाधार,
इससे करें भवसागर पार।
हम जन-जन को बनाएँ आर्य,
धरा से, सब मिटें अनार्य।
भ्रष्टाचार का न होवे नाम,
धरा यह बने स्वर्ग का धाम।
अनुशासन हो हमारा मंत्र,
धरती पर हो बस आर्य-तंत्र।
"अहम् भूमिम् अददाम् आर्याय,"
आदेश प्रभु! तव लोकहिताय।
यह भूमि है आर्यों के लिए,
सदाचारी सुपुत्रों के लिए।

318, विपिन गार्डन, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-110059
मो. : 7503070674

सूचना - हमें खेद है कि कुछ अपरिहार्य प्रशासनिक एवं तकनीकी कारणों से गतमास का अंक नहीं भिजवा सके। अतः यह नवंबर-दिसम्बर का संयुक्त अंक आपके हाथ में है।

thearyasamaj.org

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
*email:*deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org

of Delhi Arya Pratinidhi Sabha
Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer
Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar,
Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan Nov.-Dec. 2014 Vol. 8 No.5
कार्तिक-पौष 2070 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. भूमि है सुपुत्रों के लिए 2
–प्रियवीर हेमाइना
2. संपादकीय 4
3. सांख्य दर्शन 7
–डॉ. भारत भूषण
4. समय की चुनौती का जवाब थे स्वामी श्रद्धानन्द 8
–प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार
5. स्वामी श्रद्धानन्द–एक राष्ट्रीय व्यक्तित्व
–रणवीर पुरी 12
6. देवतास्वरूप भाई परमानंद की 140वीं जयन्ती 15
–श्री इन्द्र देव
7. विदेशों में जाकर वैदिक धर्म के प्रचारक–एक परिचय 17
–डॉ. भवानीलाल भारतीय
8. महात्मा आनन्द स्वामी जी का एक संस्मरण 19
–महात्मा नारायणस्वामी
9. कर्मयोगी स्वामी सर्वानन्द जी महाराज
–देवेन्द्रनाथ शर्मा 22
10. महान क्रान्तिकारी हरदयाल 25
–हरिकृष्ण निगम
11. हिन्दू धर्मरक्षक वीर वन्दा वैरागी
–सुन्दरदास 29
21. चीन ऐसे कर रहा है सफाया आतंकवाद का 33
13. We are All Hindus Now 35
-Lisa Miller

thearyasamaj.org

संपादकीय

जातिवाद, वंशवाद का घुन समाज को खाए जा रहा है

देश में जब चुनाव होते हैं तब विभिन्न दल अपने उम्मीदवारों का चयन करते समय यह देखते हैं कि उनका प्रत्यशी किस जाति, वंश या परिवार से संबंधित है। मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए दल ऐसे व्यक्तियों को अपना प्रत्याशी बनाते हैं जो उस क्षेत्र की प्रमुख जाति या परिवार से जुड़ा हो। इससे देश में जातिवाद को बढ़ावा मिलता है। ईश्वर ने सब मनुष्यों, को एक-सा उत्पन्न किया है इसलिए उनमें जाति, वंश के आधार पर ऊँच-नीच का कोई भेद नहीं होना चाहिए। चुनाव में जातिवाद का प्रयोग खुलकर होता है। वहाँ देखा जाता है कि उनके चुनाव क्षेत्र में कितने जाट, गूजर, यादव, राजपूत, कुर्मी, भंगी, धोबी, सुनार, लुहार या अन्य अनुसूचित जातियों, जनजातियों के लोग हैं और कितने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, कायस्थ, मुसलमान आदि हैं। इससे विभिन्न वर्गों में विद्वेष पैदा होता है। यह आपसी फूट का मुख्य कारण है।

मनु के अनुसार वैदिक व्यवस्था में मनुष्यों को उनके कर्मों के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चार वर्गों में विभाजित किया गया था। ये वर्ण व्यक्ति के जन्म के आधार पर नहीं थे। प्राचीन काल में छात्र गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त करते थे। उस अवधि में वे केवल विद्यार्थी होते थे। शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् दीक्षान्त के समय वे अपने गुण, कर्म और स्वभाव अर्थात् रुचि के अनुसार भावी जीवन के लिए अपने वर्ण का चयन करते थे। इसी के आधार पर वे अपने पेशे या व्यवसाय अपनाते थे। ब्राह्मण का कार्य अध्ययन-अध्यापन करना, क्षत्रिय का कार्य देश व समाज की आंतरिक और बाह्य सुरक्षा करना, प्रशासन करना, वैश्य का कार्य कृषि और व्यापार करना था। जो व्यक्ति बौद्धिक दृष्टि से इन कार्यों को नहीं कर सकता था, वह समाज सेवा के

thearyasamaj.org

कार्य करता था और उसे शूद्र कहा जाता है था। उस समय शूद्र भी शिक्षा पाकर ब्राह्मण हो सकता था और जो पढ़-लिख नहीं सकता था वह ब्राह्मण से शूद्र हो जाता था।

धीरे-धीरे वर्ण व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभाव पर आधारित न हो कर जन्म पर आधारित हो गई। द्विज यानी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के घर में पैदा होने वाला अशिक्षित व्यक्ति भी ब्राह्मण आदि कहलाने लगा और शूद्र के यहाँ उत्पन्न होने वाला व्यक्ति पढ़-लिख कर भी शूद्र ही कहलाता है। जन्म पर आधारित वर्ण व्यवस्था का यह बड़ा दोष है।

जन्म पर आधारित जाति व्यवस्था के कारण परस्पर ऊँच-नीच का भाव पैदा हो गया, और इससे समाज सैकड़ों जातियों में बँट गया। एक-दूसरे को ऊँचा-नीचा समझने के कारण उच्च वर्ग के लोगों ने अन्यों को अछूत करार दिया और उनसे रोटी-बेटी का संबंध समाप्त कर दिया। मुगलों और अंग्रेजों के शासनकाल में इसे और बढ़ावा मिला। वे बाँटों और शासन करो के सिद्धान्त पर चलकर इसका लाभ उठाते रहे। महाभारत काल से देश में फूट का यह रोग आरंभ हुआ। स्वामी दयानन्द ने "सत्यार्थप्रकाश' में लिखा है कि 'आपस की फूट से कौरवों, पांडवों और यादवों का सत्यानाश हो गया, सो तो हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग पीछे लगा है। न जाने यह भयंकर राक्षस कभी छूटेगा या आर्यों को सब सुखों से छुड़ाकर दुःख सागर में डूबा मारेगा"।

जात-पाँत को देश की एकता के लिए घातक मान कर उसे समाप्त करने के लिए अनेक प्रयास किए गए। इसे कांग्रेस और आर्यसमाज ने अनुभव किया। स्वामी श्रद्धानंद ने जो उस समय कांग्रेस के प्रमुख नेता थे गाँधी जी से आग्रह किया कि अछूतोद्धार के काम को भी हाथ में लें। उस समय महात्मा गाँधी अली ब्रदर्स (मो. मुहम्मद अली और शौकत अली) के प्रभाव में थे। इनकी इच्छा थी कि मुसलमान और ईसाई अछूतों को आधा-आधा बाँट लें। स्वामी जी के बार-बार कहने पर भी जब गाँधी जी ने अछूतोद्धार का कार्यक्रम हाथ में नहीं लिया। उन्होंने स्वामी जी से यह कहकर उनकी बात नहीं मानी कि कांग्रेस एक राजनीतिक संस्था है, उसे धार्मिक

thearyasamaj.org

मामलों में दखल नहीं देना चाहिए। इसी से नाराज़ होकर स्वामी श्रद्धानंद जी कांग्रेस से अलग हो गए। हालांकि कई वर्ष बाद कांग्रेस ने हरिजनों के मंदिर-प्रवेश के लिए आंदोलन चलाया। आज देश में जात-पाँत की जड़ें बहुत गहरा गई हैं। गाँव-देहात में कहीं भी जाओ तो नवागत व्यक्ति से पहले यही पूछा जाता है कि आप किस जात से हैं? जो शायद सामान्य व्यक्ति को अजब सा लगेगा।

स्वाधीनता संग्राम में अंग्रेज शासकों ने देश की एकता को खंडित करने के लिए पहले तो मुसलमानों को अलग मताधिकार दिया और इसके बाद अछूत हिन्दुओं को भी अलग मताधिकार देने का प्रस्ताव किया। गाँधी जी ने हिन्दुओं में फूट डालने के उद्देश्य से किए गए इस प्रस्ताव के विरोध में 21 दिन तक उपवास किया इससे हरिजनों के पृथक् मताधिकार देने का निश्चय तो टल गया परन्तु सरकार ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए चुनाव में अलग सीटों का प्रावधान कर दिया।

आजादी के बाद हमारी सरकार ने संविधान में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए दस वर्ष तक आरक्षण की व्यवस्था कर दी। परन्तु वोट बैंक की राजनीति के कारण 60-62 वर्ष बीत जाने पर भी वह जारी है और कोई आशा नहीं कि वह कभी समाप्त भी होगी या नहीं। हाल ही में हुए महाराष्ट्र और हरियाणा के चुनाव में इस प्रवृत्ति में कुछ बदलाव दिखाई दिया है। महाराष्ट्र में मराठों की और हरियाणा में जाटों की हार हुई।

जात-पाँत को समाप्त करने के लिए सभी शिक्षा संस्थाओं में आरंभ से प्रवेश आदि के फार्मों तथा जनगणना और सरकारी आवेदन पत्रों में जाति का कॉलम हटा देना चाहिए ताकि इस विचार को मूल से ही समाप्त कर दिया जाए। जब तक जात-पाँत के प्रचलन को समाप्त करने के लिए समाज और सरकार मिलकर प्रयास नहीं करेंगे तब तक इसे समाप्त करना संभव न होगा।

संपादक

thearyasamaj.org

सांख्य दर्शन (अध्याय–1, सूत्र–82)

–डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

जैसा कि पूर्व सूत्र में बताया गया कि कार्य की उत्पत्ति से पूर्व कारण में कार्य का अस्तित्व होता है। इसकी पुष्टि में सूत्रकार अगले सूत्र में एक और हेतु प्रस्तुत करते हैं, सूत्र है:–

कारणभावाच्च।।83।।

अर्थ– (कारणभावात् च) और (कार्य का अस्तित्व) कारण में होने से (भी यही सिद्ध होता है।)

भावार्थ– कारण के सिवाय अन्यत्र कार्य का अस्तित्व नहीं होता। अतएव कार्य के उत्पन्न होने से पहले कारण की अवस्था में कारण में कार्य का अस्तित्व बना रहता है। इसलिए कारण से कार्य की उत्पत्ति मानना उचित है। अर्थात् सत्कार्य का उत्पाद मानना युक्तिसंगत है, असत् कार्य का नहीं। हम लोक में भी देखते हैं कि जैसा कारण होता है तद्रूप (उसी जैसा) कार्य होता है, जैसे– आम के पेड़ से तद्रूप आम पैदा होगा, अमरूद नहीं; गेहूँ के पौधे से तद्रूप गेहूँ ही पैदा होगा धान या कोई दूसरा अन्न नहीं। इससे कार्य की कारणरूपता का निश्चय होता है। इस प्रकार कार्य के कारण से प्रकट न होने पर भी कारण रूप में कार्य का अस्तित्व बना रहता है, यह भी निश्चय होता है। इसलिए असत् कार्य (कारण में अविद्यमान कार्य) की उत्पत्ति संभव नहीं है।

सी–2ए, 16/90 जनकपुरी,
नई दिल्ली–10058

BRAHMARPAN ON WEBSITE

WE ARE HAPPY TO STATE THAT THE ISSUES OF OUR MONTHLY JOURNAL BRAHMARPAN ARE NOW ALSO AVAILABLE ON THE WEBSITE **www.thearyasamaj.org** of DELHI ARYA PRATINIDHI SABHA.

thearyasamaj.org

समय के चुनौती का जवाब थे स्वामी श्रद्धानन्द

-प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

आर्नोल्ड तोयनबी एक प्रसिद्ध समाजशास्त्री हुए हैं। उन्होंने समाज में होने वाले परिवर्तनों के सम्बन्ध में एक नियम का प्रतिपादन किया है। उनका कथन है कि समाज में जब कोई असाधारण परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है, तब वह व्यक्ति व समाज के लिए चुनौती या चैलेंज का रूप धारण कर लेती है, वह परिस्थिति व्यक्ति तथा समाज को मानों ललकारती है, और पूछती है कि है कोई माई का लाल जो इस असाधारण परिस्थिति का, इस ललकार का, इस आह्वान का मर्द होकर सामना कर सके, इस ललकार का जवाब दे सके?

तोयनवी का कथन है कि जब हम वैयक्तिक या सामाजिक रूप से किसी भौतिक या सामाजिक विकट परिस्थिति से घिर जाते हैं, तब हममें या समाज में उस कठिन परिस्थिति, कठिन समस्या को हल करने के लिए एक असाधारण स्फुरण उत्पन्न हो जाता है। भौतिक अथवा कठिन विषम परिस्थिति हमें मलियामेट न कर दे, इसलिए इस परिस्थिति के आह्वान, उसकी ललकार, उसकी चुनौती के प्रति जो व्यक्ति प्रतिक्रिया करने के लिए उठ खड़े होते हैं, चुनौती का उत्तर देते हैं, जो समाज को नया मोड़ देते हैं, वे ही समाज के नेता कहलाते हैं। जब समाज किसी उलझन में फँस जाता है तब उसमें से निकलना तो हर एक चाहता है, हर व्यक्ति की यही इच्छा होती है कि यह संकट दूर हो, परन्तु हर कोई उस चुनौती का सामना करने के लिए अखाड़े में उतरने को तैयार नहीं होता। विक्षुब्ध समाज का असन्तोष, उसकी बेचैनी जिस व्यक्ति के प्रतिबिम्बित होने पर जो व्यक्ति उस असन्तोष का सामना करने के लिए खम ठोककर खड़ा होता है, वही जनता की आकांक्षाओं का सरताज होता है।

मैं स्वामी श्रद्धानंद के जीवन को इसी दृष्टि से देखता हूँ। वे समय की चुनौती का, समय की ललकार का जीता-जागता जवाब थे। क्या हमारे सामने चुनौतियाँ नहीं आतीं? हम हर

thearyasamaj.org

दिन चुनौतियों से घिरे हुए हैं, परन्तु हममें उन चुनौतियों का सामना करने की हिम्मत नहीं होती। व्यक्ति जीवित रहता है जब वह चुनौतियों का सामना करता रहता है, समाज की चुनौती का काम ही व्यक्ति अथवा समाज में हिम्मत जगा देना है, परन्तु ऐसी अवस्था भी आ सकती है जब व्यक्ति अथवा समाज हिम्मत हार बैठे कि उसमें ललकार का सामना करने की ताकत ही न रहे। ऐसी हालत में वह व्यक्ति बेकार हो जाता है। स्वामी श्रद्धानंद उन व्यक्तियों में से थे जो सामने चैलेंज को देखकर उसका सामना करने के लिए शक्ति के उफान से भर जाते थे। उनका जीवन हर चुनौती का जवाब था, तभी इतने वर्ष बीत जाने पर भी हम उन्हें नहीं भुला सके।

उनके जीवन के पन्नों को पलटकर देखिए कि वे क्या थे? वे अपनी जीवनी में लिखते हैं कि जब उनके बच्चे स्कूल से पढ़कर आते थे तब गाते थे- **'ईसा-ईसा बोल तेरा क्या लगेगा मोल'**। आज भी हमारे सामने ऐसी कोई बात चुनौती का रूप नहीं पैदा करती। उस समय वे महात्मा मुन्शीराम थे, उनके सामने बच्चों का इस प्रकार गाना एक चुनौती के रूप में उठ खड़ा हुआ जिसकी प्रतिक्रिया के रूप में एक नवीन शिक्षा प्रणाली की नींव रखी गई। आज जो सब लोग गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के सिद्धान्तों को शिक्षा के आदर्श तथा मूलभूत सिद्धान्त मानने लगे हैं उसका मूल एक चुनौती का सामना करना था जो एक साधारण घटना के रूप मे महात्मा मुन्शीराम के सामने उठ खड़ी हुई थी।

सत्यार्थप्रकाश पढ़ते हुए उन्होंने पढ़ा कि गृहस्थाश्रम के बाद वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहिए। यह कोई नया आविष्कार नहीं था। जो भी वैदिक संस्कृति से परिचित है वह जानता है कि इस संस्कृति में चार आश्रम हैं। परन्तु नहीं, उस महान् आत्मा के सामने तो यह चुनौती थी। पढ़ते सब हैं, परन्तु उसके लिए तो पढ़ना पढ़ने के लिए नहीं, कुछ करने के लिए था। गुरुकुल विश्वविद्यालय की एक जंगल में स्थापना कर वे वहीं रहने लगे। मृत वानप्रस्थाश्रम को उन्होंने अपने जीवन में

thearyasamaj.org

क्रियात्मक रूप देकर जीवित कर दिया। यह क्या था अगर यह वैदिक संस्कृति की चुनौती का जवाब नहीं था? फिर वे वानप्रस्थ तक जाकर ही टिक नहीं गये। वानप्रस्थ के बाद संन्यास लिया, और देश में महात्मा मुंशीराम यह नाम विख्यात हो गया। ऐसे भी लोग मुझे मिले हैं जो 'महात्मा मुंशीराम' और 'स्वामी श्रद्धानंद'- इन दोनों को अलग-अलग व्यक्ति समझते थे। इसका कारण यही है कि महात्मा मुन्शीराम ने जिस प्रकार लगातार चुनौती पर चुनौती का सामना किया, उसी प्रकार श्रद्धानन्द ने भी चुनौती का सामना किया, इसलिए कुछ व्यक्तियों के लिए जो यह नहीं जानते थे कि महात्मा मुन्शीराम ही संन्यास लेकर स्वामी श्रद्धानन्द बन गये- ये नाम दो महापुरुषों के नाम हो गए जो अपने-अपने जीवनकाल में असाधारण सामाजिक परिस्थितियों, सामाजिक चुनौतियों के साथ जूझकर अपने जीवन की अमर कहानी लिख गये।

गुरुकुल में रहते हुए वे एक पत्र निकाला करते थे जिसका नाम था 'सद्धर्म प्रचारक'। यह पत्र उर्दू में प्रकाशित हुआ करता था। इसके ग्राहक उर्दू जानने वाले थे, हिन्दी जानने वाले नहीं थे। एक दिन अचानक वह पत्र सब ग्राहकों के पास उर्दू के स्थान पर हिन्दी में पहुँचा। यह क्या चुनौती का जवाब नहीं था? जिस व्यक्ति ने घोषणा की हो कि वह गुरुकुल में ऊँची से ऊँची शिक्षा मातृभाषा हिन्दी में देने का प्रबन्ध करेगा, उसका पत्र उर्दू में प्रकाशित हो- यह विडम्बना थी। उन्हें मालूम था कि एकदम उर्दू से हिन्दी पत्र करने में ग्राहक छूँट जायेंगे, परन्तु इस चुनौती का उन्हें सामना करना था। परिणाम यह हुआ कि उनकी आवाज को सुनने के लिए ग्राहकों ने हिन्दी सीखना शुरू किया और पत्र के ग्राहक पहले से कई गुना बढ़ गए। लोग हिन्दी की दुहाई देते और उर्दू या अंग्रेजी लिखते-बोलते थे परन्तु उस महान् आत्मा के लिए यही बात एक चुनौती का काम कर गई।

वे किस प्रकार चुनौती का सामना करते थे- इसके एक नहीं अनेक उदाहरण हैं। सत्याग्रह के दिनों में जब जनता का जुलूस

thearyasamaj.org

दिल्ली के घंटा घर की तरफ बढ़ता जा रहा था, तब गोरे सिपाहियों ने जुलूस को रोकने के लिए गोली चलाने की धमकी दी। यह धमकी उस महान् आत्मा के लिए भारत माता की बलिदेवी पर अपने को कुर्बान कर देने की ललकार थी। साधारण मिट्टी के लोग उस धमकी को सुनकर ही तितर-बितर हो जाते परन्तु श्रद्धानन्द ही था जिसने छाती तानकर गोरों को गोली चलाने के लिए ललकारा। समाजशास्त्र का यह नियम है कि असाधारण परिस्थिति उत्पन्न होने पर महान् आत्मा के हृदय में असाधारण स्फुरण हो जाता है, असाधारण क्रियाशक्ति जो उसे समकालीन मानव समाज से बहुत ऊँचे ले जाकर शिखर पर खड़ा कर देती है।

मुझे इस स्थल पर मथुरा शताब्दी की एक घटना स्मरण हो आती है। उत्सव हो रहा था। स्वामी जी उत्सव का संचालन कर रहे थे, मुझे उन्होंने अपने पास कार्यवाही के संचालन के लिए बैठाया हुआ था। अचानक खबर आयी कि शहर में दंगा हो गया है, पण्डों ने आर्यसमाजियों को पीटा, उन पर लट्ठ चलाए। स्वामी जी इस समाचार को सुनते ही मुझसे कहने लगे देखो, कार्यवाही बदस्तूर चलती रहे, तुम यहाँ से मत हिलना, मैं मथुरा शहर जा रहा हूँ। स्वामी जी उसी समय घटना-स्थल पर पहुँचे और स्थिति को सँभालकर लौटे। उनके जीवन की एक-एक घटना तोयनबी के इस समाजशास्त्रीय नियम की विशद व्याख्या है कि विकट परिस्थिति आने पर प्रत्येक व्यक्ति उस परिस्थिति से निकलने के लिए जूझना चाहता है, परन्तु भीरुता के कारण जूझ नहीं पाता। उस समय कोई महापुरुष ही होता है जो सब की पीड़ा को अपने हृदय में संजोकर परिस्थिति की विषमता से लड़ने के लिए उठ खड़ा होता है, और जब कोई ऐसा महापुरुष सामने आता है तब हमारे सिर उसके पैरों पर नत हो जाते हैं।

समय की चुनौती का जवाब देने वाले महापुरुष भारत में हुए हैं उनकी श्रेणी में श्रद्धानंद का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जा चुका है। ऐसी महान् आत्मा को मेरा बार-बार नमन है।

thearyasamaj.org

स्वामी श्रद्धानन्द-एक राष्ट्रीय व्यक्तित्व

-रणवीर पुरी

स्वामी जी ने 1917 में संन्यास ग्रहण किया। उन्होंने गुरुकुल के ब्रह्मचारियों तथा गुरुकुल भूमि से विदाई ली जैसे कि 2 मार्च 1902 को वह जालन्धर से विदा लेकर हरिद्वार में गुरुकुल की स्थापना के लिए चल दिए थे। संन्यास ग्रहण करने के बाद स्वामी जी का वास्तविक विशाल रूप निखर आया। अब वह किसी संस्था, समाज अथवा वर्ग के नहीं सारे देश के सम्बन्ध में सोचने लगे थे। पंजाब आर्यसमाज में आपसी गुटबन्दियों ने उन्हें समाज के क्षेत्र से निकाल कर शिक्षा के क्षेत्र में रचनात्मक कार्य में लग जाने की प्रेरणा दी थी और तब जब कि गुरुकुल में उसकी अधिकारिणी सभा में भी उसी प्रकार की राजनीति ने प्रवेश कर लिया, तो उन्होंने समझ लिया कि समाज और शिक्षा के क्षेत्रों में अब उनकी आवश्यकता नहीं रह गई।

स्वामी जी की दृष्टि पहले भी दूरबीन की तरह थी, जो केवल पास का ही नहीं, बहुत दूर तक देख सकती थी। परन्तु अब तो जैसे उनका मानस एक उपग्रह हो गया था, जो भूलोक को विहंगम दृष्टि से देख सकता था।

संन्यास के बाद उन्हें गढ़वाल में दुर्भिक्ष पीड़ितों की पीड़ा सुनाई दी और उन्होंने पाया कि साम्राज्यवादी सरकार प्रयत्न कर रही थी कि अन्य प्रदेशों के लोगों को उन पीड़ितों के कष्ट का ज्ञान न हो। गढ़वाल आने-जाने में बन्दोबस्त के नाम पर पाबन्दी लगा दी थी, यहाँ तक कि महँगाई का बहाना करके सरकार ने बद्रीनाथ यात्रा को भी बन्द कर दिया था। स्वामी जी अंग्रेजों की चालों को समझते थे। उन्होंने 23 अप्रैल, 1917 को 'देश' पत्र में सहायता कोष के लिए अपील निकलवाई। बिना बिलम्ब के पाँच हजार रुपए जमा हो गए और वे स्वयं पौड़ी में जाकर सेवा कार्य में लग गए। तभी इलाहाबाद की भारत सेवा समिति के मंत्री श्री हृदयनाथ कुंजरू ने भी वहाँ आकर पाँच सहायता केन्द्र खोल दिए। गुरुकुल के ब्रह्मचारी

thearyasamaj.org

भी बड़ी संख्या में आकर सेवा कार्य में जुट गए। उन्होंने 19 दिन में 197 मील का दौरा किया और लगभग 74 हजार रुपए पीड़ितों की सहायतार्थ बाँटे।

सरकारी पिट्ठुओं से सेवा समिति के कार्यालय से झण्डा उतारने का प्रयत्न किया तो स्वामी जी ने ललकारा- 'यह झण्डा गोखले की आत्मा ने लगाया है, इसे कोई नहीं उतरवा सकता'। स्वामी जी का सिर काट लेने की धमकियाँ दी गईं। पौड़ी में एक सभा में स्वामी जी जाने लगे तो उनके सहयोगियों ने मना किया कि उनके जाने से खून-खराबा हो जायेगा। परन्तु स्वामी जी को अपनी जान की कब परवाह थी? वह समय पर जाकर मंच पर बैठ गए। सूर्य के उगते ही जैसे कोहरा छट जाता है, वैसे ही विरोधी दुम दबा कर भाग गए।

1914 के प्रथम महायुद्ध में भारतीय सेनाओं ने अपना खून देकर ब्रिटेन को जिता दिया था। उसका पुरस्कार भारतीयों को रौलेट एक्ट के रूप में दिया गया तो गाँधी जी ने सत्याग्रह करने की घोषणा की। श्रीनिवास शास्त्री ने सत्याग्रह का विरोध किया। उसी सभा में स्वामी जी ने घोषणा की कि वह सत्याग्रह के प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कर देंगे और निवास स्थान पर लौटते ही गाँधी जी को तार दे दिया। स्वामी जी जब कोई महत्वपूर्ण निर्णय लेते थे, तो उसकी सार्वजनिक घोषणा ही नहीं करते थे, क्षेत्र में तूफान की तरह कूद पड़ते थे।

7 मार्च, 1919 को सत्याग्रह की तैयारी के लिए पहली सभा हुई। स्वामी जी पहली बार 18 हजार की उपस्थिति में एक राजनीतिक मंच पर चढ़े। मुम्बई में पाँच सभाओं में, फिर सूरत में भाषण हुए। 20 तारीख को अहमदाबाद में जब पचास हजार के सामने स्वामी जी ने भाषण दिया तो ब्रिटिश सरकार दहल गई। वायसराय ने भारत सचिव माण्टेगू को तार दिया। स्वामी जी ने दिल्ली लौटकर 25, 27 और 29 मार्च को तीन सभाओं में बोल कर सोई हुई दिल्ली को झंझोड़ कर उठा दिया और 30 तारीख को हड़ताल की घोषणा कर दी।

thearyasamaj.org

सुबह से ही स्वामी जी ने दिल्ली नगर के सब प्रमुख भागों और बाज़ारों का दौरा किया जो दिल्ली वाले उस समय की स्मृति रखते हैं उनका कथन है कि छः फुट तीन इंच कद का विशालकाय वह संन्यासी जैसे धरती से ऊपर उठ कर चल रहा था। अगर हजारों की भीड़ होती थी तो इस ओर का आदमी भीड़ के दूसरे छोर पर आता हुआ देख लेता था। एक दिन में सारी दिल्ली ने मान लिया कि स्वामी जी बाहर के अन्य सभी नेताओं से केवल आकार में ही नहीं, वैयक्तिक चरित्र में भी बहुत ऊँचे हैं।

दिसम्बर, 1922 में स्वामी जी अकाली मोर्चों को बल प्रदान करने अमृतसर गए और वहाँ इतिहास की पुनरावृत्ति हुई। इस बार उन्होंने सिखों के निमन्त्रण पर अकाल तख्त पर भाषण दिया। उसी शाम उन्हें गिरफ्तार कर अमृतसर जेल में बन्द कर दिया गया। 10 अक्टूबर को 1 साल 4 महीने की सजा देकर संगीनों के पहरे में मियाँवाली जेल पहुँचा दिया गया। वहाँ से स्वामी जी ने अपने पुत्र इन्द्र जी को एक पत्र लिखा जिसमें दलितोद्धार की बात लिखी।

हरिजनों की सेवा और ब्रह्मचर्य के प्रचार के लिए अपना जीवन लगा देने का उनका निर्णय दिखाता है कि वह समाज के सबसे पिछड़े हुए वर्ग के उत्थान तथा सर्वजन के चरित्र निर्माण को सर्वोपरि मानते थे।

ऐसे कर्मवीर जीवन का अन्त उसी ब्रिटिश सरकार के षड्यन्त्रों का परिणाम था, जिसकी आँखों में वह निर्भीक नर-केसरी दस वर्षों से काँटें की तरह खटक रहा था। यह बात अब मान ली गई है कि उनकी हत्या करने वाला अब्दुल रशीद केवल एक धर्मांध मुसलमान नहीं था। उसे अंग्रेजी सरकार के गुप्तचर विभाग ने अपना साधन बनाया था।

ऐसे कर्मठ और ईमानदार राष्ट्र-सेवक को श्रद्धाञ्जलि देने का एक ही तरीका है और वह है कि प्रत्येक भारतीय राष्ट्र के हित को धार्मिक तथा जातीय भेदभाव से ऊपर रखे।

श्रद्धानन्द स्मारिका-साभार

thearyasamaj.org

देवतास्वरूप भाई परमानंद की 140वीं जयन्ती

-श्री इन्द्र देव

भाई परमानन्द क्रान्तिकारी भाई मतिदास-भाई दयाले और सतीदास के पवित्र वंश में उत्पन्न हुए थे। जो 17वीं शताब्दी में औरंगजेब द्वारा दिए गए भयंकर कष्ट सहते हुए शहीद तो हो गए किन्तु हिन्दू धर्म नहीं छोड़ा। यदि भाई जी को हिन्दुत्व की प्रतिमूर्ति कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। गुणं, कर्म, स्वभाव के आधार पर आपको देवतास्वरूप की उपाधि दी गई थी। 1906 में आपने अफ्रीका के कई देशों में जाकर वैदिक धर्म का प्रचार किया।

आपने हिन्दुओं में राष्ट्रीय व धार्मिक भावनाएँ जाग्रत करने के लिए देश के अनेक नगरों का दौरा किया। उनके ओजस्वी भाषणों ने हिन्दुओं में जागृति उत्पन्न की। उनका औषधि निर्माण का स्थान देशभक्त युवकों का केन्द्र बना रहता था। गुप्तचर पुलिस ने रिपोर्ट दी कि इनके यहाँ बम बनाए जाते हैं। 1915 में आप बन्दी बना लिए गए। आपको आजीवन कारावास की सजा देकर अण्डमान निकोबार भेज दिया गया। वहाँ इन्हें भयंकर यातनाएँ दी जाती थीं।

1907 में पंजाब में हिन्दू महासभा का गठन हुआ। 1915 में भाई परमानन्द ने हरिद्वार अधिवेशन में पं. मदन मोहन मालवीय तथा स्वामी श्रद्धानन्द के साथ अखिल भारत हिन्दू महासभा बनाई। आपके प्रयास से वीर सावरकर 1937-38 ईसवीं के अहमदाबाद अधिवेशन में राष्ट्रीय अध्यक्ष बनाए गए। वीर सावरकर ने वहीं घोषणा कर दी कि अब अ. भा. हिन्दू महासभा राजनीतिक दल है। भाई परमानन्द नेशनल असेम्बली के सदस्य चुने गए। आपने दिल्ली से साप्ताहिक हिन्दू का सम्पादन कई वर्षों तक किया। आप हिन्दुओं की दुर्दशा पर एकान्त में रोते थे।

आपने अपनी सम्पत्ति बेचकर 1930-40 में मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली में हिन्दू महासभा भवन बनवाया। यहीं आ. भा. हिन्दू

thearyasamaj.org

महासभा का कार्यालय है। देश विभाजन में आपकी राय मानी जाती तो रावी नदी सीमा रेखा बनती और लाहौर जैसा अति महत्त्वपूर्ण नगर भारत में ही रहता।

भाई जी ने देश तथा पार्टी की दशा बताते हुए कहा–नेहरु–गाँधी ने 1947 में आबादी की अदला–बदली नहीं की, जिसके कारण 3 करोड़ मुस्लिम पाकिस्तान में नहीं गए जबकि इनके हिस्से की जमीन दी जा चुकी थी। अब इनकी आबादी 20 करोड़ हो गई है। ये स्वाभाविक रूप से आक्रामक–संगठित–मांसाहारी हैं और सह–अस्तित्व समर्थक नहीं हैं इसलिए छोटी–छोटी बात पर लड़ते हैं और पुलिस द्वारा समझौता करा देने के बाद भी हथियार लेकर मारने आ जाते हैं जिसमें हिन्दू पिटता है, मार खाता है, लेकिन विचित्र बात है कि हिन्दू नेहरु–गाँधी की सोच व मानसिकता का समर्थक बना रहता है। अब शायद इसमें परिवर्तन आ जाए।

देश में रावण राज्य जैसी दशा हो गई है। शराब की नदियाँ बह रही हैं। मांसाहार का प्रचलन बहुत बढ़ गया है। बलात्कार, रेप, गैंगरेप, अपहरण, डकैती, यौन हिंसा, मिलावट, पाखण्ड, अन्धविश्वास, गोवध जारी है। हिन्दू को जाति–उपजाति में बाँट दिया गया है। अल्पसंख्यक तुष्टीकरण चरम सीमा पर है।

आपकी बनाई हुई पार्टी की स्थिति बहुत दयनीय है। फिर भी कार्यकर्ता संगठित नहीं है। पार्टी को धनवान प्रतिभाशाली विद्वान–बुद्धिजीवी–संघर्षशील नेताओं की आवश्यकता है ताकि 107 वर्षीय मृत–प्राय पार्टी में शक्ति आए। कृपया अपना आशीर्वाद बनाए रखें और कार्यकर्ताओं को सद्बुद्धि दें ताकि आपके स्वप्नों का राष्ट्र बने।

जब तक नई दिल्ली में हिन्दू महासभा भवन रहेगा। तब तक देवता स्वरूप भाई परमानन्द का नाम रहेगा।

निवास–18/186,

टीचर्स कॉलोनी, बुलंदशहर,

मो. : 08958778443

thearyasamaj.org

विदेशों में जाकर वैदिक धर्म का प्रचार करने वाले आर्यसमाज के भूमण्डल प्रचारक– (एक परिचय)

–डॉ. भवानीलाल भारतीय

1. **भाई परमानन्द** – आर्यसमाज के पहले प्रचारक थे जो 1906 में अफ्रीका महाद्वीप में धर्म प्रचारार्थ गये। पर्याप्त समय वहाँ रह कर वे इंग्लैण्ड चले गये तथा लंदन में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा के समीप रहे। उनकी द्वितीय विदेश यात्रा 1909 में हुई। इस बार वे अमेरिका तथा ब्रिटिश गुयाना गये तथा वहाँ धर्म प्रचार किया। इन देशों में जाने वाले वे प्रथम आर्य मिशनरी थे।

2. **स्वामी शंकरानन्द**–मूलतः जालंधर (पंजाब) के निवासी पं. शंकरनाथ ने संन्यास लेकर स्वामी शंकरानन्द नाम धारण किया। 1908 में वे विश्वशान्ति सम्मेलन में भाग लेने के लिए लंदन गये तथा श्रीलंका में धर्म प्रचार किया।

3. **स्वामी स्वतंत्रानन्द** – आर्यसमाज के तेजस्वी एवं विद्वान् संन्यासी स्वामी स्वतन्त्रानन्द ने एकाधिक बार धर्म प्रचारार्थ विदेश यात्राएँ की थीं। 1901, 1914, 1920 तथा 1921 में चार बार विदेश यात्राएँ कर उन्होंने मलाया (वर्तमान मलेशिया), श्रीलंका, इण्डोनेशिया, सिंगापुर, मॉरिशस, बर्मा (वर्तमान म्याँमार), तथा पूर्वी अफ्रीका में धर्मप्रचार किया। प्रवासी भारतीयों पर उनके प्रचार कार्य की छाप अमिट रही।

4. **स्वामी मंगलानन्द पुरी**–मूलतः इलाहाबाद के निवासी स्वामी मंगलानन्द पुरी ने धर्म प्रचारार्थ मॉरिशस तथा अफ्रीका की यात्राएँ कीं। उन्होंने अपने इन यात्रा अनुभवों को 'अफ्रीका यात्रा' नामक बृहद् ग्रन्थ में लेख बद्ध किया है।

5. **डॉ. चिरंजीव भारद्वाज** – सत्यार्थप्रकाश के प्रथम अंग्रेजी अनुवादक डा. चिरंजीव भारद्वाज पेशे से चिकित्सक (एफ. आर. सी. एस., एम. आर. सी.जी. तथा डी. पी. एच. आदि

thearyasamaj.org

उपाधि प्राप्त) थे।

1910 में वे वैदिक धर्म के प्रचार हेतु प्रथम बर्मा गये और वहाँ से सीधे मॉरिशस चले गये। यहाँ उन्होंने आर्य परोपकारिणी सभा का संगठन किया। जीविका हेतु वे चिकित्सा कार्य करते और ग्राम-ग्राम जाकर प्रचार करते। इसमें उन्हें अपनी पत्नी सुमंगली देवी का भी सहयोग मिला था। उनका यह प्रचारकार्य बहुत कष्टसाध्य था।

6. **स्वामी ध्रुवानन्द** - पूर्वाश्रम में राजगुरु पं. धुरेन्द्र शास्त्री ने संन्यास लेकर स्वामी ध्रुवानन्द नाम धारण किया। धर्म प्रचारार्थ वे मॉरिशस तथा अफ्रीका के कई देशों में गये।

7. **महात्मा आनन्द स्वामी** - अपनी रोचक आध्यात्मिक कथाओं के कारण लोक विश्रुत महात्मा आनन्द स्वामी के मर्मस्पर्शी प्रवचन भारत की भांति अन्य देशों में भी अत्यन्त लोकप्रिय थे। फलतः उन्होंने मॉरिशस, इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि देशों में जाकर अध्यात्मज्ञान की गंगा बहाई।

8. **स्वामी सत्यप्रकाश** - पूर्वाश्रम में रसायन शास्त्र के प्रोफेसर रहे डॉ. सत्यप्रकाश ने संन्यास धारण करने के पश्चात् धर्म और अध्यात्म को लेकर जो प्रवचन देश-विदेश में दिये वे उनके वैज्ञानिक चिन्तन तथा प्रखर बुद्धिवाद को दर्शाते हैं। वे एकाधिक बार यूरोप, अमेरिका तथा अफ्रीका गये तथा वहाँ के लोगों को धर्म के मूलभूत तत्वों से परिचित कराया। मॉरिशस में उनका प्रचार कार्य अत्यन्त सफल रहा।

उपर्युक्त जाने माने विदेश प्रचारकों के अतिरिक्त सर्व श्री आनंद विद्यालंकार (फीजी.), पं. श्रीकृष्ण शर्मा (फीजी.), पं. वैद्यनाथ शास्त्री, स्वामी विद्यानंद विदेह, पं. बुद्धदेव विद्यालंकार (स्वामी समर्पणानन्द) आदि के नाम उन लोगों में शामिल हैं जिन्होंने अनेक बार विदेशों में प्रचारार्थ गमन किया।

3/5, शंकर कालोनी, श्रीगंगानगर

thearyasamaj.org

महात्मा आनन्द स्वामी जी का एक संस्मरण

(महर्षि दयानन्द के आदर्श अनुयायी
महात्मा नारायण स्वामी के संबंध में)

मुझे जेल के दो दिन सदा याद आते रहते हैं जब महात्मा नारायण स्वामी जी के साथ मुझे दिन-रात रहने का सुअवसर प्राप्त हुआ। हैदराबाद सत्याग्रह में नौ महीने की सजा हो चुकी थी। उन दिनों महात्मा नारायण स्वामी जी बृहदारण्यक उपनिषद् का हिन्दी अनुवाद कर रहे थे। गुलबर्गा जेल के बड़े वार्ड में वे धरती पर फटा कम्बल बिछाकर सोते थे। जेल में एक रात की बात सुनिए-जब सारे सत्याग्रही सो रहे थे तो महात्मा नारायण स्वामी जी ने मुझे आवाज दी। मैं उनकी सेवा में उपस्थित हो गया तो कहने लगे कि शेख अब्दुल बहाब, सुपरिटेन्डेंट जेल हम दोनों को जेल से निकाल कर किसी और स्थान पर रखना चाहता है। उसकी चाल यह है कि हमें यहाँ से हटाकर सत्याग्रहियों पर वो अत्याचार करे। इसलिए हमें सावधान रहना चाहिए। कल प्रातः उसने आकर यह बात शुरू करनी है। मैंने कहा महात्मा जी हमें किसी प्रकार से भी सत्याग्रहियों का साथ नहीं छोड़ना चाहिए। मैंने उत्तर में कहा कि मैं तो उन सत्याग्रहियों के साथ ही रहूँगा। उन्हीं के साथ खाऊँगा और बैठूँगा। इसके पश्चात् महात्मा नारायण स्वामी जी कहने लगे कि यह तो साधारण बात थी। मैंने तुम्हें, रात के इस समय में इसलिए कष्ट दिया है कि इस सत्याग्रह से आर्यसमाज को पर्याप्त शक्ति मिलेगी। परन्तु वह थोड़े समय के लिए होगी। आर्यसमाज पहले से अधिक शिथिल हो जाएगा। दो बातें आर्यसमाज को उभरने नहीं देती। एक तो इसकी घरेलू फूट और दूसरे अध्यात्मवाद की कमी। तुम और महाशय कृष्ण यदि मिलकर काम करो तो आर्यसमाज को चार चाँद लग जाएँ। मैंने कहा कि मैं तो इसके लिए सर्वथा तैयार हूँ। महात्मा जी ने कहा कि मुझे आप पर ऐसा ही विश्वास है।

thearyasamaj.org

सत्याग्रह सफलतापूर्वक समाप्त हो गया। लाहौर पहुँचकर मैंने महाशय कृष्ण जी से मिलकर महात्मा नारायण स्वामी जी की शुभ इच्छा का वर्णन किया परन्तु इसके ऊपर कभी अमल न हो सका। हाँ पहले जैसी कटुता न रही। 1945 में मुझे महात्मा जी के आश्रम रामगढ़ में जाने का अवसर मिला। वहाँ महात्मा जी के आश्रम का उत्सव हो रहा था। पंडित गंगाप्रसाद जी, जज टिहरी तथा देवली के मुख्य आर्य कार्यकर्ता लाला नारायण दत्त जी भी विद्यमान थे। मैं अपने साथ भगवे रंग के वस्त्र ले गया था। महात्मा जी ने पूछा ये वस्त्र क्या हैं? मैंने कहा मैं आपसे संन्यास की दीक्षा के लिए आया हूँ। महात्मा जी ने बड़े प्यार से मेरी ओर देखा और कहा, बड़ा शुभ विचार आपके मन में उत्पन्न हुआ है। मैंने कहा कि आर्यसमाज की शिथिलता को देखकर और उसमें अध्यात्मवाद की आवश्यकता अनुभव करके मैंने निश्चय किया है कि चतुर्थ आश्रम में प्रवेश कर जाऊँ। महात्मा नारायण स्वामी जी ने कहा कि आपका संन्यास साधारण नहीं है। स्वामी श्रद्धानंद जी के पश्चात् आर्य जगत में ये एक महत्वपूर्ण कार्य होगा। यह साधारण बात नहीं, आपको संन्यास की दीक्षा हरिद्वार पहुँच कर दी जाएगी। नाम अभी से आनन्द स्वामी सरस्वती रख देते हैं। परन्तु तब देश विभाजन की गड़बड़ के कारण से यह कार्य सम्पन्न न हो सका। महात्मा जी का शरीर रोगग्रस्त हो गया और ऑपरेशन के लिए महात्मा जी लाहौर पहुँचे। उन्हें सर गंगाराम हॉस्पिटल में भर्ती कराया गया। अस्पताल में महात्मा जी के पास बैठा हुआ था तो कहने लगे कि देश विभाजन के पश्चात् आर्यसमाज की शक्तियाँ बड़ी बिखर जाएँगी और उन्हें एकत्र करने में यदि भरसक प्रयत्न न किया जाएगा तो आर्यसमाज की शिथिलता अधिक बढ़ जाएगी। मैंने कहा परमात्मा आपको जल्दी स्वस्थ कर दे ताकि विभाजन के पश्चात् आर्यसमाज को अधिक बलशाली बना सकें। उस

thearyasamaj.org

दिन लाहौर में अग्निकांड और मारकाट शुरू हो गई। अस्पताल के डॉक्टरों ने कहा कि इस भयंकर अवस्था में ऑपरेशन लाहौर में नहीं होना चाहिए। तब महात्मा जी को दिल्ली ले जाया गया और वहाँ से डा. श्याम स्वरूप जी के पास बरेली ले जाया गया। डॉ. श्यामस्वरूप जी ने महात्मा जी की सेवा तन, मन, धन से की। एक दिन महात्मा जी ने डॉ. श्याम स्वरूप जी से कहा कि अब आप मुझे किसी प्रकार की औषधि तथा अन्न, दूध न दें। अब मैं इस शरीर में रहना उचित नहीं समझता और अगले दिन उन्होंने प्राण त्याग दिए। महात्मा जी के साथ सात महीने इकट्ठा रहने से मुझे यह अनुभव हुआ कि महात्मा जी योग की उच्च सीढ़ी पर पहुँच चुके थे और उनके हृदय में उत्कट इच्छा थी कि वे आर्यसमाज के अन्दर आध्यात्मिक ज्योति जगाएँ। इसी उद्देश्य से उन्होंने आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर और रामगढ़ में 'साधना आश्रम' की स्थापना की। परन्तु जीवन यात्रा समाप्त हो गई और वे अपने स्वप्न आर्य-जगत् के सुपुर्द कर गए ताकि आर्य-जगत् इसे क्रियात्मक रूप दे सके।

'आर्य मित्र' से साभार

महात्मा गाँधी के विचार

- कमजोर कभी क्षमा नहीं कर सकता, क्षमा करने का गुण ताकतवर का है, आँख के बदले आँख की भावना का हश्र यह होगा कि दुनिया में आँखों वाला कोई नहीं बचेगा।
- मेरी आज्ञा के बिना मुझे कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकता।
- सच पूछो तो हम सब द्रौपदी की स्थिति में हैं, हमारी लाज कोई मनुष्य नहीं ढक सकता, उसे तो ईश्वर ही ढक सकता है, ऐसा जरूर होता है कि वह अपनी सहायता मनुष्य के द्वारा भेजता है, पर मनुष्य तो निमित्त मात्र है।

thearyasamaj.org

कर्मयोगी स्वामी सर्वानन्द जी महाराज

–देवेन्द्रनाथ शर्मा

स्वामी सर्वानन्द जी कर्म में विश्वास रखते थे, फल पाने की उनकी कोई इच्छा नहीं थी। वह सारा जीवन श्रेष्ठ कर्म करते रहे। जो लोग स्वामी जी के समीप रहे हैं वह सभी बताते हैं कि स्वामी जी बहुत कर्मशील थे। उन्होंने अन्य सन्यासियों की तरह आराम का जीवन नहीं जिया। इसलिए वह जीवनभर दयानन्द मठ की उन्नति के लिए व आर्य समाज की प्रगति के लिए कार्य करते रहे। उन्होंने महान् कर्मशील त्यागी, तपस्वी स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के साथ कार्य किया था, जो गुण स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी में थे, वह सब स्वामी जी में भी थे। वे स्वतन्त्रानन्द जी को अपना आदर्श व गुरु मानते थे। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने जब दयानन्द मठ दीनानगर की स्थापना की तो यह नियम बनाया कि मठ–वासियों के लिए एक समय का भोजन भिक्षा द्वारा लाया जाएगा। उन्होंने भिक्षा के कुछ नियम बनाए थे, जो इस प्रकार हैः–

1. भिक्षा माँगने वाला व्यक्ति अन्य कोई बात किसी से भी उस समय नहीं करेगा।

2. कोई भिक्षा न दे, यदि गाली भी दे तो उसका उत्तर न देगा और बुरा न मानेगा।

3. किसी के घर के अन्दर प्रवेश नहीं किया जाएगा। बाहर रहकर भिक्षा माँगी जाएगी।

4. किसी के द्वार पर एक मिनट से अधिक नहीं रुका जाएगा। एक मिनट भी तभी रुकें यदि घर के अन्दर से आवाज आए कि ठहरो।

5. भिक्षा उतनी ही माँगे जितनी आवश्यकता हो। यदि आश्रम में भिक्षा के समय और यात्री अचानक आ जाएँ तो जो मिला, उसी को बाँटकर खाएँ। पुनः भिक्षा नहीं ली जाएगी।

स्वामी सर्वानन्द जी ने स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के बनाए हुए इन नियमों का मठ की ओर से पूरा–पूरा पालन करवाया और ये नियम आज तक चले आ रहे हैं। इनका कभी उल्लंघन नहीं

thearyasamaj.org

किया गया। दोपहर का भोजन मठ में आज भी भिक्षा से आता है। मठ के पास बहुत सम्पत्ति है, परन्तु सर्वानन्द जी ने पुराने इस नियम को नहीं बदला।

स्वामी जी की दिनचर्या

स्वामी जी प्रातः तीन-चार बजे के बीच में उठ जाते थे। शौच आदि के निवृत्त होकर चार बजे सभी मठ-वासियों को जगा देते थे। सब उठकर प्रातःकाल के मन्त्रों का पाठ करते थे। स्वामी जी फिर से अपनी कुटिया में आ जाते थे। 5 से 6 बजे तक भ्रमण के लिए मठ से बाहर चले जाते थे। 6 से 7 बजे बाहर से आने वाले महानुभावों से वार्तालाप करते थे, वस्त्र आदि स्वयं धोते थे। प्रातः 8 बजे से 12 तक औषधालय में रोगियों को देखना, दोपहर 12 से 1 बजे के बीच भोजन, 2 से 3 बजे तक फिर दूर से आने वाले रोगियों को देखना, दोपहर के बाद 3 से 5 बजे तक सबके साथ मठ में श्रम करना, सायं 6 से 7 बजे तक वार्तालाप, 7 से 8 बजे रात्रि तक सन्ध्या स्नान आदि। 8 से 8.30 बजे तक गौशाला में जाकर एक-एक गाय को प्यार देना, ब्रह्मचारियों से सब गऊओं का वृतान्त पूछना। 8.30 से 9 बजे तक फार्मेसी व मठ के आय-व्यय के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना। रात्रि 9 बजे से 9.30 तक भोजन, 9.30 से 10 बजे तक मठ सम्बन्धी कार्यक्रम बनाना। एक बार फिर सोने से पहले गऊओं को देखने के लिए जाना, फिर अपनी कुटिया में आकर पत्रों का उत्तर देना, जब नींद आ गई सो जाना और प्रातः फिर 3 से 4 बजे के बीच में उठ जाना। जब आँख खुल जाए तो बिस्तर त्याग देना और साधना में बैठ जाना। यह उनकी दिनचर्या थी। स्वामी जी का गऊओं से बहुत प्यार था। इसलिए वह उनकी खुराक का पूरा ध्यान रखते थे। कई बार अपने हाथ से उन्हें रोटियाँ खिलाते थे और बहुत प्यार करते थे। यह सब जानकारी स्वामी सदानन्द जी से प्राप्त हुई है। स्वामी जी ने अपना समय प्रत्येक कार्य के लिए निश्चित किया हुआ था, वे सब काम समय पर किया करते थे और

thearyasamaj.org

यह भी चाहते थे कि अन्य लोग भी समय पर कार्य करें। दयानन्द मठ में उन्होंने पूरा अनुशासन बनाया हुआ था। सभी उसका पालन किया करते थे। वे अपने आप को सदा व्यस्त रखते थे और साधना में सदा लगे रहते थे। यही कारण था कि स्वामी जी 104 वर्ष की अवस्था में भी अपने सभी कार्य स्वयं किया करते थे। वे किसी योगी से कम नहीं थे। उनका परमात्मा में अटल विश्वास था। कई बार वे किसी को जो आशीर्वाद देते थे और जो कहते थे वह पूरा हो जाता था। वे बहुत कम बोलते थे परन्तु जो बोलते थे, वह बड़ा महत्वपूर्ण होता था। स्वामी जी के दर्शन करने के लिए लोग बहुत दूर-दूर से आया करते थे। उनमें एक आकर्षण था, जो लोगों को अपनी ओर खींचता था।

जैसा मैंने ऊपर लिखा है स्वामी जी एक महान तपस्वी थे उनका जीवन तपमय था। दयानन्द मठ दीनानगर उनकी साधना स्थली थी। वे यहाँ बैठ कर साधना करते रहे, तप करते रहे। उनका किसी से द्वेष नहीं था, वह सभी से प्यार करते थे। स्वामी जी अपनी कुटिया के आगे तख्त लगाकर बैठ जाते थे तो वहाँ धूप आ जाए या छाया आ जाए, उसे इधर-उधर नहीं करते थे, कड़कती धूप में भी बैठे रहते थे। कई बार ब्रह्मचारी आते और स्वामी जी से कहते कि स्वामी जी यहाँ धूप आ गई है। आपका तख्त छाया में कर देते हैं। स्वामी जी कहते थे नहीं इसे यहीं रहने दो। मेरे लिए यह ठीक है और वह धूप को बिना महसूस किए बैठे लिखते रहते थे। वे धूप-छाँव, गर्मी-सर्दी से ऊपर उठे हुए थे। उनके लिए यह सब एक समान था।

उस महान् तपस्वी, महान् कर्मशील सन्त को मैं अपनी ओर से तथा पंजाब की सभी शिक्षा संस्थाओं की ओर से तथा आर्य विद्या परिषद पंजाब की ओर से श्रद्धांजलि भेंट करता हूँ।

आर्य विद्या परिषद् पंजाब,
गुरुदत्त भवन, किशनपुरा चौक,
जालन्धर शहर (पंजाब)

thearyasamaj.org

महान क्रान्तिकारी हरदयाल

–हरिकृष्ण निगम

जब स्वामी दयानन्द के शिष्य व स्वतंत्रता सेनानी श्याम जी कृष्ण वर्मा ने 1907 में इंग्लैण्ड के 'इण्डिया हाउस' जो भाई परमानन्द सहित क्रान्तिकारियों का केन्द्र बन चुका था, भारतीय स्वराज्य परिषद की एक सभा में एक राजनीतिक संस्था का प्रस्ताव रखा तभी लाला हरदयाल द्वारा इसका संविधान सम्पादित किया गया था। भारत में काशी प्रसाद जायसवाल और चन्दूलाल जी भी उन दिनों ऑक्सफार्ड में पढ़ रहे थे। अलौकिक प्रतिभा व स्मरण-शक्ति के धनी लाहौर के राजकीय कालेज से अंग्रेजी में एम.ए. की परीक्षा मात्र एक वर्ष में उत्तीर्ण करने पर भारत सरकार ने उन्हें स्नातकोत्तर परीक्षाएँ देने के लिए छात्रवृत्ति दी थीं। उन्हीं दिनों पढ़ाई के बीच हरदयाल जी के मन में यह दृढ़ हो गया कि डिग्री लेना समय नष्ट करना है- एक क्रान्तिकारी को डिग्री से क्या प्रयोजन! मैं अपना पूरा समय व ताकत देश को स्वतंत्र कराने में लगाऊँगा। हरदयाल जी को वहाँ दो छात्रवृत्तियाँ और भी मिलती थीं एक 80 पाउण्ड की और दूसरी 50 पाउण्ड की, पर उन्होंने दोनों ही ठुकराकर कष्ट का जीवन चुना। उनकी पत्नी सुन्दररानी भी साथ थीं। जो बीमार रहती थीं। कुछ ब्रिटिश नागरिक समझते थे कि उनकी 'आई.सी.एस.' बनने की महत्वाकांक्षा है इसलिए ऑक्सफोर्ड छोड़ने से उनके प्रति ब्रिटिश गुप्तचर विभाग सजग हो गया।

जनवरी 1908 में वे अपनी रुग्ण पत्नी सुन्दररानी के साथ भारत लौट आए। हरदयाल के हृदय में अपने देश के क्रान्तिकारी देशभक्तों के प्रति इतना आदरभाव था कि उन्होंने एक बार विदेश में बैठे-बैठे ही दिल्ली में रह रहे अपने बड़े भाई को पत्र लिखा जिसमें कहा गया था- 'जो दीपावली पर्व आ रहा है उस अवसर पर लाला लाजपतराय और सरदार अजीत सिंह (भगतसिंह के चाचा) की मिट्टी की मूर्तियाँ बनवाकर जनता में बेची जाएँ। भारत आकर उन्होंने लोकमान्य तिलक से भेंट की तथा एक संन्यासी देशभक्त का जीवन व्यतीत करने का व्रत लिया। दिल्ली और कानपुर में कुछ दिन निवास करने के पश्चात् वे लाहौर आ गए और कुछ दिन बाद पेरिस में उन्होंने

thearyasamaj.org

'वंदेमातरम्' नाम के पत्र का सम्पादन हाथ में लिया। लाला लाजपतराय के प्रयत्नों से उन्हें इंग्लैण्ड में रहने की अनुमति भी मिल गई। अमेरिका, फ्रांस, स्वीडन और दूसरे देशों में तीन दशकों में रहने वाले जिन भारतीयों ने प्रथम विश्व युद्ध के पहले से ही देश से अंग्रेजों को निकालने के लिए कठिनाइयों के बावजूद, प्रयास किए थे उनमें लाला हरदयाल का नाम अग्रगण्य रहेगा।

जब मात्र 55 वर्ष की अवस्था में 4 मार्च, 1939 में फिलाडेल्फिया, इंग्लैण्ड में उनकी दिल के दौरे से मृत्यु हुई, तो कहा गया कि यह स्वाभाविक मृत्यु नहीं थी, उनकी हत्या की गई थी। भारत में यह समाचार एक महीने तक नहीं छपा था क्योंकि उस समय दुनिया की सबसे बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसी रॉयटर ने इसे प्रकाशित करना जरूरी नहीं समझा था। देश के अंग्रेजी दैनिकों के तथाकथित खोजी पत्रकार भी किसी न किसी बहाने इस समाचार को सत्यापित करने से डरते थे।

लाला हरदयाल का जन्म 14 अक्टूबर, 1884 को दिल्ली के गुरुद्वारा शीशगंज के पीछे स्थित चीराखाने में हुआ था। आज उनके नाम पर दिल्ली में उस गली के अलावा कहीं कोई स्मारक नहीं है। 4 मार्च को जब उनकी पुण्य तिथि मनाई जाती है उस दिन के बाद फिर हमारा देश उन्हें अगले साल तक शायद याद भी न करेगा। हरदयाल जी अपने पिता जिला कचहरी दिल्ली के रीडर गौरी दयाल माथुर के सबसे छोटे पुत्र थे। ज्ञानार्जन की प्रेरणा व हिन्दू संस्कृति के सम्मान की देन उन्हें माँ से और अंग्रेजी, उर्दू, फारसी की दक्षता उन्हें अपने पिता से मिली थी। वे अपनी कक्षाओं में सदैव प्रथम आते थे और बी.ए. की परीक्षा उन्होंने सेन्ट स्टीफेन्स कालेज से पास की और आगे की पढ़ाई के लिए वे लाहौर और विदेश गए थे।

जब नवम्बर, 1913 में प्रशान्त तटीय हिन्दुस्तान संघ-(हिन्दुस्तान एसोसिएशन ऑफ द पैसेफिक कोस्ट) ने 'गदर' शीर्षक से समाचार-पत्र निकालना शुरू किया तो युवा हरदयाल उसके पहले सम्पादक बने। यह पत्र कई भाषाओं में अनुवाद के साथ अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका तथा एशिया के भारतीयों व भारतीय सेनाओं को निःशुल्क भेजा जाता था। गदर पार्टी में

thearyasamaj.org

उनके अतिरिक्त कर्तारसिंह सराबा, सोहनसिंह मकना, जगतराम आदि ऐसे दुर्लभ गुणों से युक्त सेनानी थे जो अमेरिकी गदर पार्टी द्वारा जुलाई क्रान्ति की लपट को विश्व के कई देशों में फैलाने का स्वप्न देखते थे। लाला हरदयाल अमेरिका में सन् 1911 में आए थे और कुछ समय तक बिना वेतन के स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में पढ़ाते रहे थे। वे सैनफ्रांसिस्को के रेडिकल क्लब के सचिव बने और वहीं उन्होंने "बाकुनिन इन्स्टीट्यूट' व 'गदर पार्टी' की स्थापना की थी।

"बाकुनिन इन्स्टीट्यूट" के पहले के अधिकतर यूरो-अमेरिकी मूल के सदस्य भारत की स्वतंत्रता के पक्षधर थे। क्रांतिकारी हरदयाल के विचारों से भयभीत होकर सन् 1914 में अधिकारियों द्वारा उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। इसके पहले कि वे निष्कासित किए जाते वे खुद गुप्त रूप से यूरोप पहुँच गए। उनके जाने के बाद दूसरे भारतीय रामचन्द्र 'गदर' के सम्पादक बने जो उर्दू, गुजराती, गुरमुखी व हिन्दी में भी प्रकाशित होता था। इसका उद्देश्य भारत में सशस्त्र क्रांति कराना था।

अमेरिकी इतिहास लेखक हचू जॉनस्टन और जोन जेन्सन के अनुसार एक विशेष चार्टर जलयान कोमागाटा मारू द्वारा कई सौ भारतीय मई सन् 1914 में वैन्कूवर पहुँचे थे। कनाडा की सरकार ने इसे अपने देश के आप्रवासी कानून के विरुद्ध मानकर उन्हें वहाँ उतरने न दिया। क्योंकि जहाज के यात्रियों को खाना-पानी नहीं मिल पा रहा था, इसलिए वेन्कूवर के सिखों ने ब्रिटिश सम्राट व भारत के वायसराय से हस्तक्षेप के लिए तार भेजा पर कुछ परिणाम नहीं निकला। दो महीने तक रुकने के बाद और कनाडा के अधिकारियों की क्रूरता के कारण उस जापानी जहाज को लौटना पड़ा। वहाँ पहुँचने के लिए पहले ही भारतीय आप्रवासी 70,000 डालर खर्च कर चुके थे। उनमें रोष व्याप्त था और कनाडा व दूसरे देशों में बसे भारतीयों को उनसे पूरी सहानुभूति थी।

'कोमागाटा मारू' के प्रकरण के बाद उत्तरी अमेरिका में गदर पार्टी के सदस्यों ने हरदयाल के संकेत पर एक नई रणनीति बनाई जिसके अनुसार अलग-अलग टुकड़ियों में उन्हें भारत लौटकर सशस्त्र क्रान्ति का संदेश देना था। तब तक प्रथम विश्वयुद्ध शुरू हो गया था और भारतीय राष्ट्रभक्त अंग्रेजों के

thearyasamaj.org

विरुद्ध जर्मनी से सहायता की आशा लगाए हुए थे। अंग्रेजों ने अपने जासूसों द्वारा गदर पार्टी के सदस्यों के भारत पहुँचने के गन्तव्य को भाँप कर उन्हें गिरफ्तार किया और अनेकों को फाँसी दी गई। उनके नाम आज भी हमारी सरकार के अभिलेखागारों में दर्ज हैं पर किसी खोजी पत्रकार को उन्हें उजागर करने का शायद साहस नहीं हुआ।

सन् 1915 के बाद तो अमेरिका में भी गदर पार्टी छिन्न-भिन्न हो गई और 1917 में पार्टी की अमेरिकी शाखा भी टूट गई। हरदयाल के बाद इसके अध्यक्ष रामचन्द्र की ब्रिटिश गुप्तचरों ने हत्या करवा दी थी। हरदयाल भारतीयों पर मुकद्दमा चलवाने वालों के षड्यंत्रों व भारतीयों को दण्ड व फाँसी के कारण व्यथित थे।

हरदयाल के अनेक साथियों के नाम आज भी ब्रिटिश रिकार्ड में दर्ज है। सच देखा जाए तो जब 1908 में गिरफ्तारी से बचने के लिए हरदयाल फ्रांस गए तो उसके बाद वे भारत कभी न लौट सके। उनका प्रवासी जीवन 30 वर्षों से अधिक रहा जिसमें उनका सारा जीवन रूस, मिस्र, आयरलैण्ड, फ्रांस और स्वीडन में बीता जो भारत की स्वतंत्रता के बड़े पक्षधर थे।

स्वीडन में वे अकेले 15 वर्षों तक रहे और अंग्रेजी, जर्मन और फ्रांसीसी पत्रिकाओं में उन्होंने दर्जनों लेख लिखे। यदि मुड़कर देखें तो सन् 1908 में ही उनके लेख पंजाब के उर्दू समाचार पत्रों में छपते थे। उन लेखों में से अधिकांश को पंजाब के प्रसिद्ध शायर और क्रांतिकारी लाला लालचंद 'फलक' ने अपनी 'वन्देमातरम् बुक एजेंसी' से पुस्तक के रूप में प्रकाशित कर दिया था। प्रकाशित पुस्तकों में थीं- 'कौमी तालीम', 'कौमें किस तरह जिन्दा रहती हैं'? 'सरकारी मुलाजिमियत' और 'मज़ामीन हरदयाल।' इनके अलावा भी उन्होंने अंग्रेजी में विपुल साहित्य का सर्जन किया जहाँ उनकी क्रांतिकारी आत्मा लहरें मारती दिखती थी। स्वाधीनता, भाषा और जाति का सम्बन्ध, हिन्दुओं का सामाजिक पतन व उनके अन्दरूनी शत्रु उनके विषयों के केन्द्र बिन्दु रहे थे। पर फिर भी उनके जैसा आशावादी क्रान्तिकारी कदाचित् पैदा नहीं हुआ जो मात्र 54 वर्ष की अल्पायु में एक विराट् जीवन बिताकर दिवंगत हो गया।

ए-1002, पंचशील हाईट्स, महावीर नगर
कान्दिवली (प.), मुम्बई-400067

thearyasamaj.org

हिन्दू धर्मरक्षक वीर वन्दा वैरागी

–सुन्दरदास

(वन्दा वीर वैरागी स्वातंत्र्य योद्धाओं में अति जाज्वल्यमान नक्षत्र थे, जिनके प्रकाश को उस समय के कुछ बेसमझ, कायर और देशद्रोही लोगों के षड्यंत्र ने लील लिया। कौन थे ये और इनके पीछे के लोग?–इस बात की पूरी जानकारी प्रत्येक देशवासी को आज होनी चाहिए। देवतास्वरूप भाई परमानन्द की पुस्तक 'वीर वैरागी' इस विषय में एक ऐतिहासिक दस्तावेज का स्थान रखती है– (संपा.))

भारत वर्ष का इतिहास वीर पुरुषों की क्रांतिकारी गाथाओं से भरा पड़ा है। इन महापुरुषों में वीर बन्दा वैरागी का स्थान बहुत ऊँचा है। वीर वन्दा वैरागी के समान भारत क्या, दुनिया के किसी भी देश के इतिहास में ऐसी वीर गाथा नहीं मिलती, जो इनके जीवन में मिलती है। वह एक तरफ तो सेनापति, संगठनकर्ता थे, दूसरी तरफ एक राजपुरुष और उत्तम न्यायकर्ता थे और तीसरी ओर एक संत–तपस्वी भी थे। इन गुणों के कारण आज भी वे हमारे हृदय के सम्राटों के सम्राट् हैं। वे कोई सामान्य व्यक्ति नहीं थे। उनका न केवल वीर पुरुष के रूप में ही बहुत ऊँचा स्थान है, अपितु वे ईश्वर–भक्ति, ज्ञान और धार्मिक शक्ति से भी भरपूर थे और राजसत्ता प्राप्त करने पर भी उन्होंने वैराग्य नहीं छोड़ा।

जन्म: वीर वैरागी का जन्म कश्मीर के पुंछ जिले के राजौरी में एक किसान डोगरा राजपूत राजा श्री रामदेव के घर 27 अक्टूबर सन् 1670 को हुआ था।

इनका बचपन का नाम लक्ष्मणदेव था। वे बचपन से ही चंचल स्वभाव के थे। इनका क्रीडास्थल घर–आँगन न रहकर जंगल बना। जब वे 14 वर्ष के हुए तो एक दिन शिकार करते समय उनके बाण से एक हिरणी का वध हो गया। हिरणी के पेट से दो बच्चे निकले, जो उसी समय तड़प–तड़प कर मर गए। यह देखकर लक्ष्मण को बहुत दुःख हुआ और इस कारण उन्होंने घरबार छोड़ दिया। वैराग्य से भरे हुए साधु वैरागी ने जानकीदास के पास जाकर वैराग्य ज्ञान की दीक्षा ली। वहाँ उनका नाम माधोदास वैरागी रखा गया। इन्होंने वैराग्य धारण कर ईश्वर–भक्ति में वर्षों तपस्या की। इसके वाद वे तीर्थ यात्रा के लिए हरिद्वार, बद्रीनाथ, काशी होते हुए दक्षिण में

thearyasamaj.org

गोदावरी नदी के तट पर नांदेड़ पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपना एक स्थायी आश्रम बनाया। वैरागी की तपस्या का प्रभाव इतना बढ़ गया कि इनका नाम सारे क्षेत्र में विख्यात हो गया। वहाँ के लोगों में इनके प्रति अटूट श्रद्धा हो गई। वे गरीबों और बीमारों की सहायता करते। वहाँ के लोग इनके प्रति अटूट श्रद्धा से नतमस्तक होते। श्री माधोदास वैरागी इतने विख्यात हो चुके थे कि हजारों की संख्या में लोग इतने दर्शन करते आते। वह उन लोगों को सद्भावना सम्मान देते, लेकिन पाखण्डियों को आश्रय नहीं देते थे। वैरागी सांसारिक मोह-माया छोड़ चुके थे, लेकिन गुरु गोविन्दसिंह जी महाराज के साथ उनकी भेंट ने उनके जीवन की धारा को ही बदल दिया। गुरु महाराज जी के साथ उनकी भेंट 1708 ई. में हुई थी। गुरुजी ने बंदा को पंजाब की परिस्थितियाँ बताई और उन्हें उत्तर भारत जाने की प्रेरणा दी। वैरागी यह सब सुनकर द्रवित हो उठे और उत्तर की ओर जाने को तैयार हो गये। इस समय उनकी बचपन की शिक्षा काम आई। उस शिक्षा के कारण वे न सिर्फ वीर साहसी योद्धा थे, बल्कि कुशल सेनापति भी थे। गुरुजी ने उन्हें 25 व्यक्ति, एक तलवार और पाँच तीर दिये। उनके कुशल सेनापति होने का ही परिणाम है कि उन्होंने पूरी योजना तैयार की कि कहाँ से सेना का गठन किया जा सकता है और साधन जुटाये जा सकते हैं। वह भरतपुर से राजस्थान होते हुए शक्तिशाली सेना लेकर पंजाब पहुँचे और शत्रु पर अचानक टूट पड़े। जिन लोगों ने गुरु जी को त्रस्त किया था, उन सबसे बन्दा ने चुन-चुनकर बदला लिया।

उन्होंने फतेहाबाद, सिरसा, कैथल, भिवानी और सोनीपत पर विजय प्राप्त की। इसके बाद सरहिन्द की ईंट से ईंट बजाई और गुरूजी के साहबजादों का बदला लिया और वहाँ के सूबेदार वजीर खाँ और दीवान सुच्चानन्द को समाप्त कर दिया, क्योंकि वजीर खाँ ने ही गुरु गोविन्दसिंह जी के पुत्रों को दीवारों में चुनने की आज्ञा दी थी और दीवान सुच्चानन्द ने सूबेदार को सलाह दी थी कि दुश्मनों के बच्चों को समाप्त करना अच्छा है, ताकि आगे से भय न रहे। इसके बाद वैरागी ने जलालुद्दीन के गाँव पर हमला किया। उसके दस हजार सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया तथा सढौरा पर विजय पाई।

इस प्रकार वैरागी ने आठ साल तक लगातार युद्ध किया और

thearyasamaj.org

शत्रुओं से बदला लिया। सन् 1719 ई. में हिमाचल के राजा उदयसिंह की पुत्री से विवाह किया। विवाह के उपरान्त भी उन्होंने धर्मयुद्ध जारी रखा। जब दिल्ली के बादशाह फर्रुखसीयर ने देखा कि बंदा ने पंजाब में अपनी शक्ति बढ़ा ली है और छोटे-छोटे क्षेत्र फतह कर लिये हैं, तो बादशाह को भय हुआ कि कहीं वैरागी दिल्ली पर हमला न कर दे। इस भय को दूर करने के लिए उसने अपने दरबारियों को बुलाया और कहा कि जो वैरागी को पकड़कर लायेगा, उसको बड़ी जागीर दी जायेगी। लेकिन किसी की हिम्मत न हुई कि वह बंदा वैरागी को पकड़ सके।

अन्त में, यह निश्चय हुआ कि वैरागी के साथियों में फूट डाली जाये। इस षड्यंत्र में फर्रुखसीयर वैरागी और उसके साथियों में फूट डालने में सफल हो गया। बन्दा के कुछ साथी उससे अलग हो गये और उन्होंने बादशाह से मिलकर बंदा की शक्ति को कमजोर कर दिया।

वैरागी ने उन्हें बहुत समझाया कि बादशाह तुम्हें धोखा दे रहा है और वह तुम्हारा वध कर सकता है। इससे देश को भारी क्षति होगी, परन्तु वे लोग लोभ-लालच के जाल में फँस चुके थे। इस हरकत से देश को भारी हानि हुई। वीर वैरागी का बना-बनाया काम बिगड़ गया। घर की फूट के कारण सारे राष्ट्र को तबाही का सामना करना पड़ा। शक्ति कम होने के कारण वीर वैरागी पकड़ लिये गये और उनको दिल्ली में कैदी बना कर लाया गया। उनको अनेक कष्ट दिये गये, यहाँ तक कि उनके बच्चे का कलेजा निकालकर उनके मुँह में ठूँसा गया लेकिन बंदा ने मुँह से उफ तक न की और न ही उनके पाँव डगमगाये।

आज 344 वर्ष से भी अधिक समय हो गया है लेकिन इतिहास साक्षी है कि जहाँ यह वीर योद्धा, संन्यासी, तपस्वी और वैरागी थे, वहाँ वह देश तथा समाज के सुधारक भी थे। उन्होंने जागीरदारी को खत्म किया, सरहिन्द को फतह करके लोहगढ़ को राजधानी बनाया। तत्कालीन इतिहासकारों ने इन्हें एक वीर योद्धा माना है। इन्होंने देश को विदेशी हुकूमत से आजाद कराने के लिए जैसे-को-तैसा वाली नीति पर चलकर जालिमों से बदला लेते हुए जीवनभर संघर्ष किया।

भारत माँ के सपूत ने धर्मयुद्ध किया। इन्होंने जो रास्ता अपने

thearyasamaj.org

लिए निर्धारित किया, उस पर अन्त तक चलते रहे। बड़ी से बड़ी कठिनाई में भी इन्होंने अपने लक्ष्य प्राप्त करने के मार्ग को कभी नहीं त्यागा। इतिहास साक्षी है कि इन्होंने भक्तिमार्ग और राजमार्ग को अपनाया तथा भारत की गुलामी की जंजीरों को काटते हुए अपना संपूर्ण जीवन न्यौछावर कर दिया। इन्होंने अपने सात सौ चालीस साथियों के साथ दिल्ली के चाँदनी चौक में बलिदान देकर अपना और अपने साथियों का जीवन सार्थक किया। इनके जीवन के बलिदान से राष्ट्र में नई जागृति आई और सम्मान व गौरव की चेतना जागी, जिससे प्रेरणा पाकर देशवासी स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी बने। परिणामस्वरूप सन् 1757ई. की पलासी की लड़ाई से लेकर 1857 की क्रांति तक स्वतंत्रता संग्राम ने विकराल रूप धारण कर लिया।

इसके पश्चात् विदेशी मुगल शासन जहाँ 1757 ई. में समाप्त हो चुका था, वहाँ 1857 में अंग्रेजी शासन भी हिल गया था। यह उनकी प्रेरणा का परिणाम था। 1857 से 1947 ई. तक स्वतंत्रता की क्रांति का दौर चला और देश स्वतंत्र हुआ। यह इन्हीं जैसे महापुरुषों के बलिदानों का परिणाम है।

उस वीर पुरुष ने धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष-इन चारों पुरुषार्थों पर चलकर अपना जीवन सार्थक किया और धर्म-मर्यादा के बन्धन में बँध कर इस परम्परा को आगे बढ़ाया। धर्म के कँटीले धरातल पर पाँव रखकर चलने से जो पीड़ा हुई, उसे वीर बन्दा वैरागी ने धैर्य से सहा। धार्मिक प्रवृत्ति का होने के कारण इस वीर पुरुष ने धर्म और धैर्य रूपी अग्निकुंड में अपना जीवन होम दिया। उस होम की अग्नि ज्वाला की लपटें आज भी दिखाई देती हैं।

वीरों में वीर बंदा अग्रगण्य हैं। चरित्र के धनी, यह कुलश्रेष्ठ और धर्मदाता वीर है। कर्मसिद्धि के लिए शरीर की चिन्ता से दूर उनका समस्त जीवन वीरत्व का सार था। जिसने राष्ट्र के लिए हँसते-हँसते प्राण दिये। उनके हृदय में राष्ट्रभक्ति और धर्म की प्रबल तरगें तरंगित होती रहती थीं। तुर्क-यवनों के दुराचारों से पीड़ित भारत के उद्धार के लिए वह संपूर्ण जीवन कटिबद्ध रहे। उनका उद्देश्य भी महान् था। वे तुच्छ व्यक्तिगत स्वार्थों से कोसों दूर रहे।

ए-21, पुराने क्वार्टर, सिंगल स्टोरी,
रमेश नगर, नई दिल्ली-110015

thearyasamaj.org

चीन ऐसे कर रहा है आतंकवाद का सफाया

सिक्यांग चीन का सबसे बड़ा प्रान्त है। चीन के सुदूर पश्चिम में स्थित यह राज्य पाकिस्तान, अफगानिस्तान, कजाकिस्तान तथा किर्गिस्तान से घिरा हुआ है। भारत के जम्मू-कश्मीर प्रान्त और चीन के सिंक्यांग में कई समानताएँ हैं। चीन की क्रान्ति के बाद 1949 में सिंक्यांग चीन का हिस्सा बन गया। उस समय इस राज्य में नब्बे फीसदी उइगर मुसलमान थे। जिस तरह कश्मीर को धारा 370 के अन्तर्गत विशेष अधिकार दिये गये उसी प्रकार सिंक्यांग को भी स्वायत्त क्षेत्र का दर्जा दिया गया। कश्मीर आज आतंक और अलगाववाद से जूझ रहा है जबकि सिंक्यांग में अब ऐसी कोई समस्या नहीं है। यह कैसे हुआ? ऐसा नहीं कि वहाँ कट्टरपंथी आतंकवादियों ने सर नहीं उठाया। पिछले दस सालों में इस क्षेत्र में 160 लोग आतंकवादी हिंसा के शिकार हुए हैं। अलकायदा के ठिकानों में कोई छः सौ उइगर मुसलमानों ने आतंकवाद के सबक भी सीखे, पर चीन ने कट्टरपंथियों से निपटने के लिए कारगर नीति बनाई और दूरगामी और कुछ तात्कालिक उपाय भी किये।

जनसंख्या नियंत्रण - अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए चीन सरकार ने हान समुदाय के चीनियों को सिंक्यांग में बसाया। इसका परिणाम यह हुआ कि आज उइगर मुसलमानों और हानों की आबादी इस क्षेत्र में लगभग बराबर हो गयी है। चीन में जनसंख्या नियंत्रण की नीति कड़ाई से लागू की जाती है। "एक परिवार में एक बच्चा" का कानून बना हुआ है पर सिंक्यांग के हान समुदाय को इस कानून से छूट मिली हुई है। हानों को एक से अधिक संतान उत्पन्न करने तथा उइगर लड़कियों से विवाह करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। अगर चीनी कन्याओं का विवाह उइगरों से किया जाता है तो उनकी संतति को चीनी माना जाता है तथा उनकी शिक्षा चीनी भाषा में ही होती है।

देंग श्याओ पिंग की उदारवादी नीतियों के समय बड़ी संख्या में मुसलमान हज के लिए जाने लगे थे। उस समय सऊदी अरब में कट्टरपंथियों ने उन्हें जिहाद के लिए उकसाया और उसके फलस्वरूप सिंक्यांग में भी अलगाववादियों ने विषैला फन उठाना शुरू किया लेकिन चीन ने इस विषैले फन को कुचल देने में कोई लापरवाही या ढिलाई नहीं की। त्वरित कार्यवाही करते हुए चीन की सरकार ने दो सौ कट्टरपंथियों को फाँसी पर चढ़ा दिया और हजारों उइगरों को जेलों में डाल

thearyasamaj.org

दिया।

कठोर कदम - 11 सितम्बर को अमेरिका के विश्व व्यापार कैन्द्र पर आतंकवादी हमले के बाद भी चार सौ मुस्लिम कट्टरपंथियों को जेल भेजा गया। उनमें से बीस को राष्ट्रद्रोह के आरोप में मौत की सजा सुना दी गई। इसके अतिरिक्त निम्नांकित कुछ और कठोर कदम उठाये गये।

1. पचास साल से कम आयु के मुसलमानों को हज जाने पर रोक लगा दी गई।
2. 17 साल से कम उम्र के बच्चों को नमाज पढ़ने और मस्ज़िद में जाने पर प्रतिबंध लगाया गया।
3. नमाज के समय मस्ज़िदों से दी जाने वाली पाँचों अज़ानों पर रोक लगा दी गई।
4. राज्य में चलने वाले सभी मदरसे बंद कर दिये गये तथा मज़हबी साहित्य के प्रकाशन पर भी रोक लगा दी गई।
5. प्रांत के आठ हजार मौलवियों का चीन सरकार ने प्रशिक्षण शिविरों में जाना जरूरी कर दिया, जहाँ उन्हें चीनी कानून और परम्पराओं की शिक्षा दी जाती थी।
6. उइगर भाषा को अरबी लिपि में लिखे जाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया।
7. चीन में सभी मुसलमानों के नाम चीनी जैसे ही हैं तथा वहाँ की मस्ज़िदें भी चीनी शिल्प की ही हैं। सिंक्यांग में भी ऐसा ही है, साथ ही चीनी भाषा सीखने वाले मुसलमानों को विशेष पुरस्कार देना शुरू किया गया।

सिंक्यांग में आने वाले पर्यटकों और पत्रकारों पर चीनी पुलिस कड़ी नजर रखती है। यदि कोई उइगर मुसलमान उनसे बात करता देख लिया जाता है तो पुलिस उससे कड़ी पूछताछ करती है।

भारत के सेकुलरवादियों को यह सब जानकारी जरूर होगी लेकिन चीन के अल्पसंख्यकों की चिन्ता उन्हें कतई नहीं प्रतीत होती। चीन पर साम्यवाद का लेबल लगा होने के कारण कहीं भारत के सेकुलरवादियों की बोलती तो बंद नहीं है? भारत में तो अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों से अधिक आजादी और अधिकार मिले हुए हैं, फिर भी सेकुलर बिरादरी "अल्पसंख्यकों की सुरक्षा" का राग अलापती रहती है।

क्या भारत में भी आतंकवाद से निपटने के लिए कड़े कदम नहीं उठाये जाने चाहिये और क्या पोटो जैसे कदमों का विरोध कर रहे सेकुलरवादी राष्ट्र-द्रोह के अपराधी नहीं हैं?

चेतना प्रवाह

thearyasamaj.org

We Are All Hindus Now

-Lisa Miller

(Lisa Miller has been the Society editor in Newspaper since 2009. The piece given here is an extract she wrote in the Newsweek in 2009. Before coming to the Newsweek, Miller was senior special writer in The Wall Street Journal as an editorial assistant (1984) at the Harvard Business Review.)

The Rig Veda, the most ancient Hindu scripture says this: "Truth is One but the sages speak of it by many names." "एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।" " The most traditional, conservative Christians have not been taught to think like this. They learn in Sunday school that their religion is true, and others are false. Jesus said, " I am the way, the truth, and the life. No one comes to the father except through me."

Americans are no longer buying it. According to a 2008 Pew Forum survey, 65 percent of us believe that "many religions can lead to eternal life" -including 37 percent of white evangelicals, the group most likely to believe that salvation is theirs alone. Also the number of people who seek spiritual truth outside Church is growing. Thirty percent of Americans call themselves "spiritual not religious, "according to a 2009 Newsweek poll, up from 24 percent in 2005. Stephen Prothero, religion professor at Boston University, has long framed the American propensity for "the divine-deli-cafeteria religion" as "very much in the spirit of Hinduism." You're not picking and choosing from different religions, because they' are all the same," he says. "It is n't about orthodoxy. It's about what ever works. If going to yoga works great-and if going to Catholic mass plus the yoga plus the Buddhist retreat works, that's great, too."

Then there's the question of what happens when you die. Christians traditionally believe that bodies and souls are sacred, that together they comprise the "self." and that at the end of time they will be reunited in the Resurrection. You need both, in other word, and you need them forever. Hindus believe no such thing. At death, the body burns on a pyre, while the spirit-where identity resides-escapes. In reincarnation, central to Hinduism, selves come back to earth again and again in different bodies. So here is another way in which Americans are becoming more Hindu: 24 percent of Americans say they believe in reincarnation, according to a 2008 Harris poll. So agnostic are we about the ultimate fates of our bodies that we're burning them- like Hindus -after death. More than a third of Americans now choose cremation according to the Cremation. Association of North America, up from 6 percent in 1975. "I do think the more spiritual role of religion tends to deemphasize some of the more starkly literal interpretation of the Resurrection," agrees Diana Eck, professor of comparative religion at Harvard.

So let us all say "Om."

thearyasamaj.org

Date of Publi. : 30.11.2014 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 Dec. 2014
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2014-2016

य इमा विश्वा भुवनानि जुह्वद् ऋषिर्होता न्यसीदत् पिता नः।
स आशिषा द्रविणमिच्छमानः प्रथमच्छदवराँ आविवेश।। (यजु. 17/17)

जो हमारा पिता उत्पत्ति काल में हमें देने वाला और प्रलय के समय में लेने वाला और (ऋषिः) ज्ञानी परमात्मा इन सब लोक-लोकान्तरों का अपनी सामर्थ्य से प्रलय करके (न्यसीदत्) नित्य अवस्थित रहता है। वह परमात्मा (आशिषा) अपनी सामर्थ्य से (द्रविणम् इच्छमानः) जीवों के लिए सुख की इच्छा करनेवाला (प्रथमच्छत्) इस व्यापक संसार की रचना करके उसे आच्छादित करता है और वह अन्तर्यामी परमात्मा उसमें (आविवेश) प्रविष्ट हो रहा है, वही हमारा निश्चित पिता है। जो मनुष्य उसकी आज्ञा में रहता है, वह सदैव सब आनन्दों का भोग करता है।

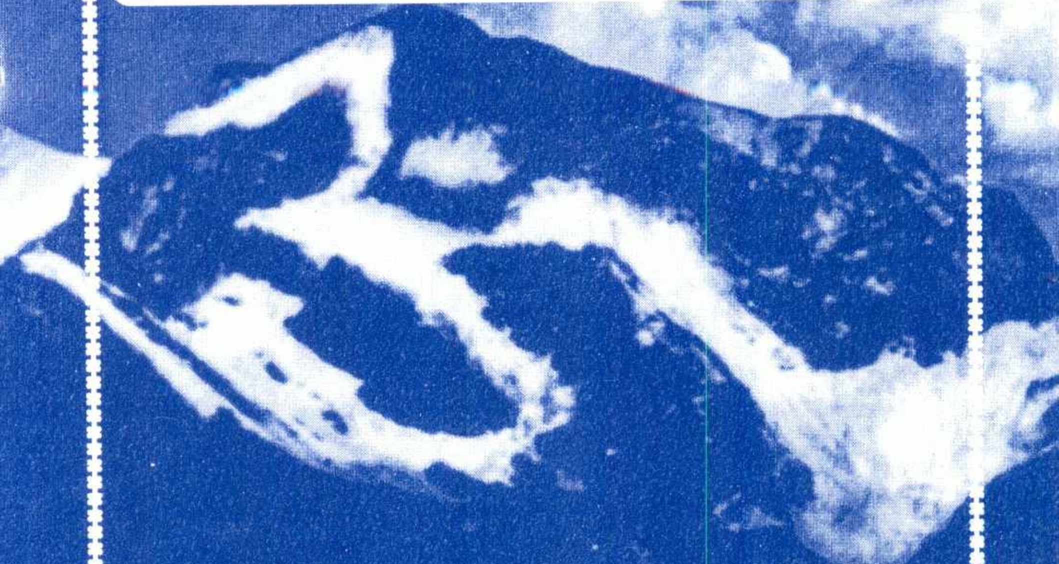

At the time of creation, the Almighty God gives birth to every thing and at the time of dissolution too He receives back everything that exists there. Thus He is 'Hota'. That 'Rishi' the Omniscient God though merges into Himself through His causal Omnipresence all the worlds at the time of dissolution' The God wishing to bring into existence the world merely through His desire overshadowing the creation also pervades the later ones (the creatures who come into being later on.)

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58